INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT SOCIOLOGY & HUMANITIES

ISSN 2277 – 9809 (online)
ISSN 2348 - 9359 (Print)

An Internationally Indexed Peer Reviewed & Refereed Journal

www.IRJMSH.com
www.isarasolutions.com

Published by iSaRa Solutions

21वीं सदी में डॉ. भीमराव अम्बेडकर के संवैधानिक विचारों की प्रासंगिकता: भारतीय लोकतंत्र के संदर्भ में एक राजनीतिक अध्ययन”

डॉ. बृजेश स्वरुप सोनकर

असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग

कर्म क्षेत्र महाविद्यालय, इटावा (उ.प्र.)

सारांश

प्रस्तुत शोधपत्र **21वीं सदी में डॉ. भीमराव अम्बेडकर के संवैधानिक विचारों की प्रासंगिकता** का भारतीय लोकतंत्र के संदर्भ में राजनीतिक अध्ययन प्रस्तुत करता है। अध्ययन में अम्बेडकर के संविधानवाद, स्वतंत्रता, समानता, बंधुता, सामाजिक लोकतंत्र, सामाजिक न्याय, मौलिक अधिकार, राजनीतिक प्रतिनिधित्व तथा संवैधानिक नैतिकता संबंधी विचारों का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट हुआ कि राजनीतिक लोकतंत्र की सफलता केवल निर्वाचन और राजनीतिक भागीदारी तक सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक समानता, नागरिक स्वतंत्रता, न्यायपूर्ण प्रतिनिधित्व तथा संवैधानिक मूल्यों के प्रभावी अनुपालन पर भी निर्भर करती है। समकालीन भारतीय लोकतंत्र में सामाजिक असमानता, प्रतिनिधित्व, नागरिक अधिकार और संस्थागत उत्तरदायित्व जैसी चुनौतियों के संदर्भ में अम्बेडकर का चिंतन आज भी महत्वपूर्ण मार्गदर्शन प्रदान करता है। अध्ययन का निष्कर्ष है कि **संवैधानिक नैतिकता और सामाजिक लोकतंत्र को मजबूत किए बिना लोकतांत्रिक व्यवस्था को अधिक समतामूलक एवं न्यायपूर्ण बनाना कठिन है।**

प्रमुख शब्द : डॉ. भीमराव अम्बेडकर, भारतीय संविधान, संवैधानिक लोकतंत्र, सामाजिक लोकतंत्र, सामाजिक न्याय, संवैधानिक नैतिकता, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, मौलिक अधिकार, भारतीय लोकतंत्र।

प्रस्तावना

भारतीय लोकतंत्र की संवैधानिक संरचना आधुनिक भारत के राजनीतिक विकास की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धियों में से एक है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत के सामने केवल औपनिवेशिक शासन से मुक्ति का प्रश्न नहीं था, बल्कि एक ऐसे राजनीतिक एवं सामाजिक व्यवस्था के निर्माण की चुनौती भी थी जिसमें स्वतंत्रता, समानता, न्याय और नागरिक गरिमा को संस्थागत आधार प्रदान किया जा सके। भारत जैसे बहुजातीय, बहुभाषी, बहुधार्मिक तथा सामाजिक-आर्थिक विषमताओं से प्रभावित समाज में लोकतांत्रिक शासन की स्थापना अपने आप में एक जटिल राजनीतिक प्रयोग था। इसी ऐतिहासिक संदर्भ में डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर का संवैधानिक एवं राजनीतिक चिंतन विशेष महत्त्व प्राप्त करता है।

डॉ. अम्बेडकर को प्रायः भारतीय संविधान के प्रमुख शिल्पकारों में से एक के रूप में स्मरण किया जाता है, किंतु उनके योगदान को केवल संविधान के निर्माण में उनकी संस्थागत भूमिका तक सीमित करना उनके व्यापक राजनीतिक चिंतन को संकुचित कर देना होगा। अम्बेडकर के लिए संविधान केवल शासन की संस्थाओं, शक्तियों और

प्रक्रियाओं को निर्धारित करने वाला विधिक दस्तावेज नहीं था, बल्कि वह ऐसी राजनीतिक व्यवस्था स्थापित करने का माध्यम था जिसके द्वारा व्यक्ति की स्वतंत्रता, सामाजिक समानता, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और न्याय को सुनिश्चित किया जा सके। उनका चिंतन इस बुनियादी प्रश्न से जुड़ा था कि **राजनीतिक लोकतंत्र को सामाजिक एवं आर्थिक असमानताओं से ग्रस्त समाज में किस प्रकार वास्तविक और स्थायी बनाया जा सकता है।**

भारतीय संविधान के निर्माण की प्रक्रिया में अम्बेडकर की भूमिका को समझना इस दृष्टि से आवश्यक है। संविधान सभा ने 29 अगस्त 1947 को प्रारूप समिति का गठन किया और डॉ. अम्बेडकर को उसका अध्यक्ष चुना गया। प्रारूप समिति ने लगभग 141 दिनों तक कार्य किया। संविधान सभा के समक्ष प्रस्तुत प्रारूप में निरंतर विचार-विमर्श, संशोधन और बहस के माध्यम से व्यापक परिवर्तन हुए। संविधान सभा में लगभग 7,635 संशोधन प्रस्तुत किए गए, जिनमें से 2,473 संशोधन वास्तव में सदन में विचारार्थ प्रस्तुत हुए। यह तथ्य स्पष्ट करता है कि भारतीय संविधान किसी एक व्यक्ति की रचना नहीं, बल्कि व्यापक संवैधानिक विमर्श, बहस और सामूहिक राजनीतिक प्रक्रिया का परिणाम था। स्वयं अम्बेडकर ने 25 नवंबर 1949 को संविधान सभा में अपने अंतिम भाषण में संविधान निर्माण का श्रेय प्रारूप समिति के अन्य सदस्यों, संवैधानिक सलाहकार बी. एन. राव तथा मुख्य प्रारूपकार एस. एन. मुखर्जी सहित अनेक व्यक्तियों के योगदान को दिया था। इस सामूहिक प्रक्रिया के भीतर अम्बेडकर की विशिष्टता उनकी **संवैधानिक एवं राजनीतिक दृष्टि** में निहित थी। उन्होंने संविधान को केवल राज्य की संस्थाओं का ढाँचा नहीं माना, बल्कि उसके सफल संचालन को राजनीतिक दलों, नागरिकों और सार्वजनिक संस्थाओं के आचरण से जोड़ा। 25 नवंबर 1949 को संविधान सभा में उन्होंने स्पष्ट किया कि संविधान राज्य की विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका जैसी संस्थाओं का निर्माण कर सकता है, लेकिन इन संस्थाओं का वास्तविक संचालन उन लोगों और राजनीतिक शक्तियों पर निर्भर करेगा जो उन्हें संचालित करेंगे। इस विचार में अम्बेडकर के संवैधानिक चिंतन का एक महत्वपूर्ण पक्ष दिखाई देता है—**संविधान की सफलता केवल उसके प्रावधानों में नहीं, बल्कि उसके अनुरूप विकसित होने वाली राजनीतिक संस्कृति में भी निहित है।**

अम्बेडकर का संवैधानिक चिंतन मूलतः लोकतंत्र को केवल चुनाव और प्रतिनिधि सरकार तक सीमित नहीं करता। उनके लिए लोकतंत्र एक ऐसी सामाजिक-राजनीतिक व्यवस्था थी जिसमें व्यक्ति की गरिमा, समानता और स्वतंत्रता वास्तविक रूप से सुनिश्चित हो। इसी कारण उन्होंने राजनीतिक लोकतंत्र के साथ सामाजिक लोकतंत्र की आवश्यकता पर बल दिया। 25 नवंबर 1949 के अपने ऐतिहासिक भाषण में उन्होंने सामाजिक लोकतंत्र को ऐसी जीवन-पद्धति के रूप में समझाया जो **स्वतंत्रता, समानता और बंधुता** को एक-दूसरे से अलग न करके परस्पर संबद्ध सिद्धांतों के रूप में स्वीकार करती है। उनके अनुसार यदि राजनीतिक क्षेत्र में समानता स्थापित कर दी जाए, किंतु सामाजिक एवं आर्थिक जीवन में गहरी असमानताएँ बनी रहें, तो लोकतंत्र अंतर्विरोधों से घिर सकता है। यही विचार भारतीय लोकतंत्र के अध्ययन में अम्बेडकर की प्रासंगिकता का केंद्रीय आधार बनता है। भारत ने संविधान के माध्यम से प्रत्येक नागरिक को राजनीतिक समानता तथा सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार का अधिकार प्रदान किया, किंतु सामाजिक संरचना में मौजूद असमानताओं का अंत केवल संवैधानिक प्रावधानों से संभव नहीं था। अम्बेडकर इसी अंतर को पहचानते थे। उनके चिंतन में राजनीतिक लोकतंत्र और सामाजिक लोकतंत्र के बीच संबंध इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि केवल मतदान का समान अधिकार व्यक्ति को सामाजिक रूप से समान नहीं बना देता। लोकतांत्रिक राज्य

की वास्तविक सफलता इस बात से भी निर्धारित होती है कि समाज में नागरिकों को समान सम्मान, अवसर और अधिकार किस सीमा तक प्राप्त हैं।

इसी संदर्भ में अम्बेडकर की **संवैधानिक नैतिकता** की अवधारणा अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। संवैधानिक व्यवस्था की स्थिरता केवल संविधान के लिखित प्रावधानों से सुनिश्चित नहीं हो सकती; इसके लिए राजनीतिक संस्थाओं, शासकों, विपक्ष, नागरिक समाज और नागरिकों में संवैधानिक मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता आवश्यक है। संवैधानिक नैतिकता का अर्थ संविधान की केवल शब्दशः व्याख्या करना नहीं, बल्कि उसकी मूल भावना, लोकतांत्रिक मर्यादाओं और नागरिक स्वतंत्रताओं का सम्मान करना भी है। इस दृष्टि से अम्बेडकर का चिंतन आज के भारतीय लोकतंत्र में संस्थागत उत्तरदायित्व, विधि के शासन, अधिकारों की सुरक्षा तथा लोकतांत्रिक असहमति जैसे प्रश्नों के अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण वैचारिक आधार प्रदान करता है। अम्बेडकर का लोकतांत्रिक चिंतन राजनीतिक सत्ता के केंद्रीकरण और व्यक्ति-पूजा के प्रति भी सावधान करता है। उन्होंने संविधान सभा में लोकतंत्र की रक्षा के लिए संवैधानिक साधनों को अपनाने तथा राजनीतिक नेतृत्व के प्रति असीमित निष्ठा से बचने की आवश्यकता पर बल दिया। उन्होंने चेतावनी दी कि लोकतंत्र का बाहरी स्वरूप बना रह सकता है, जबकि उसकी वास्तविक लोकतांत्रिक आत्मा कमजोर हो सकती है। इसीलिए उन्होंने संवैधानिक पद्धतियों, संस्थागत मर्यादाओं और नागरिक स्वतंत्रता को लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थिरता के लिए आवश्यक माना।

इसी प्रकार अम्बेडकर का चिंतन **सामाजिक न्याय और राजनीतिक प्रतिनिधित्व** के प्रश्न से भी गहराई से जुड़ा है। भारतीय समाज में ऐतिहासिक रूप से मौजूद जातिगत एवं सामाजिक वंचना ने लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व के प्रश्न को केवल निर्वाचन प्रक्रिया का विषय नहीं रहने दिया। अम्बेडकर के लिए राजनीतिक शक्ति का लोकतंत्रीकरण सामाजिक रूप से वंचित समूहों की भागीदारी से जुड़ा हुआ था। इसीलिए उनके संवैधानिक चिंतन में समानता के साथ-साथ प्रतिनिधित्व, अधिकारों की सुरक्षा और राज्य की सामाजिक भूमिका को विशेष महत्व प्राप्त हुआ। भारतीय संविधान को 26 नवंबर 1949 को संविधान सभा द्वारा अंगीकृत किया गया और 26 जनवरी 1950 को यह प्रभावी हुआ। इस प्रकार स्वतंत्र भारत ने एक ऐसी संवैधानिक लोकतांत्रिक व्यवस्था को स्वीकार किया जिसमें मौलिक अधिकार, विधि का शासन, प्रतिनिधि शासन, स्वतंत्र न्यायपालिका तथा सामाजिक न्याय के लिए राज्य की प्रतिबद्धता को संस्थागत आधार प्रदान किया गया। अम्बेडकर ने स्वयं संविधान की सफलता को उसके लिखित स्वरूप से अधिक उसके संचालन से जोड़ा था। उनके अनुसार संविधान अच्छा या बुरा होने की तुलना में यह अधिक महत्वपूर्ण है कि उसे संचालित करने वाले राजनीतिक एवं सामाजिक तत्व किस प्रकार का आचरण करते हैं। 21वीं सदी में यह प्रश्न और अधिक महत्वपूर्ण हो गया है कि स्वतंत्रता के पश्चात विकसित भारतीय लोकतंत्र अम्बेडकर द्वारा कल्पित लोकतांत्रिक आदर्शों के कितने निकट पहुँचा है। आज भारतीय लोकतंत्र में व्यापक राजनीतिक सहभागिता, नियमित निर्वाचन और संवैधानिक संस्थाओं का निरंतर संचालन दिखाई देता है, किंतु इसके साथ सामाजिक असमानता, प्रतिनिधित्व की गुणवत्ता, नागरिक अधिकारों, संस्थागत उत्तरदायित्व, राजनीतिक ध्रुवीकरण तथा संवैधानिक मूल्यों के व्यवहारिक अनुप्रयोग से जुड़े प्रश्न भी मौजूद हैं। इसलिए अम्बेडकर के विचारों को केवल ऐतिहासिक विरासत के रूप में देखने के बजाय समकालीन राजनीतिक यथार्थ की कसौटी पर पुनः परखना आवश्यक है।

इस प्रकार, 21वीं सदी में अम्बेडकर के संवैधानिक विचारों की प्रासंगिकता का अध्ययन मूलतः इस प्रश्न से संबंधित है कि **क्या भारतीय लोकतंत्र ने राजनीतिक समानता को सामाजिक एवं वास्तविक समानता में परिवर्तित**

करने की दिशा में पर्याप्त प्रगति की है? क्या संवैधानिक नैतिकता लोकतांत्रिक संस्थाओं के व्यवहार का प्रभावी आधार बन पाई है? क्या सामाजिक न्याय और राजनीतिक प्रतिनिधित्व लोकतांत्रिक शासन के केंद्रीय तत्व के रूप में पर्याप्त रूप से स्थापित हुए हैं? और क्या स्वतंत्रता, समानता तथा बंधुता के अम्बेडकरवादी आदर्श समकालीन भारतीय लोकतंत्र की चुनौतियों के समाधान के लिए आज भी वैचारिक आधार प्रदान करते हैं?

अतः डॉ. अम्बेडकर का संवैधानिक चिंतन केवल संविधान-निर्माण के इतिहास का विषय नहीं है, बल्कि वह **भारतीय लोकतंत्र की प्रकृति, उसकी उपलब्धियों, अंतर्विरोधों और भविष्य की दिशा** को समझने का एक महत्वपूर्ण राजनीतिक विश्लेषणात्मक माध्यम है। प्रस्तुत शोध इसी दृष्टिकोण से अम्बेडकर के संवैधानिक विचारों का पुनर्पाठ करते हुए यह विश्लेषित करने का प्रयास करता है कि 21वीं सदी के बदलते सामाजिक-राजनीतिक संदर्भ में उनके विचार भारतीय लोकतंत्र को अधिक न्यायपूर्ण, समतामूलक, उत्तरदायी और सहभागी बनाने के लिए किस सीमा तक प्रासंगिक बने हुए हैं।

शोध समस्या

भारतीय संविधान ने स्वतंत्रता, समानता, न्याय और लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व को राज्य-व्यवस्था का आधार बनाया है, फिर भी सामाजिक एवं आर्थिक असमानता, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, नागरिक अधिकार तथा सामाजिक न्याय से जुड़ी चुनौतियाँ आज भी विद्यमान हैं। 2024 के लोकसभा निर्वाचन में लगभग **97.98 करोड़ मतदाता पंजीकृत** हुए तथा लगभग **64.64 करोड़ मतदाताओं ने मतदान किया**, जो भारतीय लोकतंत्र की व्यापक राजनीतिक भागीदारी को दर्शाता है। इसके बावजूद राजनीतिक समानता और सामाजिक समानता के बीच अंतर बना हुआ है।

इसी संदर्भ में अम्बेडकर का यह विचार महत्वपूर्ण हो जाता है कि राजनीतिक लोकतंत्र की सफलता के लिए **स्वतंत्रता, समानता और बंधुता पर आधारित सामाजिक लोकतंत्र** आवश्यक है। अनुसूचित जातियों के लिए लोकसभा में **84** तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए **47 सीटों का आरक्षण** ऐतिहासिक सामाजिक वंचना को दूर करने के संवैधानिक प्रयासों को दर्शाता है, किंतु प्रतिनिधित्व के साथ वास्तविक सामाजिक समानता का प्रश्न अभी भी महत्वपूर्ण है। वर्तमान समय में **संवैधानिक नैतिकता, नागरिक स्वतंत्रता, सामाजिक न्याय, राजनीतिक प्रतिनिधित्व तथा लोकतांत्रिक संस्थाओं की उत्तरदायित्वशीलता** से जुड़े प्रश्नों के संदर्भ में अम्बेडकर के संवैधानिक विचारों का पुनर्मूल्यांकन आवश्यक है।

अतः इस शोध की केंद्रीय समस्या यह है कि **भारतीय लोकतंत्र में विद्यमान सामाजिक असमानता, प्रतिनिधित्व एवं संवैधानिक मूल्यों से जुड़ी चुनौतियों के समाधान तथा लोकतंत्र को अधिक समतामूलक और उत्तरदायी बनाने में डॉ. अम्बेडकर के संवैधानिक विचार किस सीमा तक प्रासंगिक एवं मार्गदर्शक हैं।**

अध्ययन की आवश्यकता

इस अध्ययन की आवश्यकता मुख्यतः पाँच स्तरों पर दिखाई देती है -

प्रथम, भारतीय लोकतंत्र के लगभग आठ दशकों के अनुभव के बाद यह मूल्यांकन आवश्यक है कि राजनीतिक लोकतंत्र के साथ सामाजिक लोकतंत्र स्थापित करने की अम्बेडकर की अपेक्षा किस सीमा तक पूरी हुई है।

द्वितीय, सामाजिक न्याय और राजनीतिक प्रतिनिधित्व भारतीय लोकतंत्र की केंद्रीय चुनौतियाँ बने हुए हैं। इसलिए अम्बेडकर की प्रतिनिधित्व संबंधी दृष्टि का समकालीन राजनीतिक परिस्थितियों में पुनर्मूल्यांकन आवश्यक है।

तृतीय, संवैधानिक संस्थाओं, नागरिक स्वतंत्रता और लोकतांत्रिक असहमति से जुड़े समकालीन प्रश्नों के संदर्भ में संवैधानिक नैतिकता की अवधारणा का पुनर्पाठ आवश्यक है।

चतुर्थ, अम्बेडकर के विचारों का समकालीन राजनीति में व्यापक प्रयोग हो रहा है, किंतु उनके मूल संवैधानिक चिंतन और राजनीतिक प्रतीक के रूप में उनकी स्वीकृति के बीच अंतर का अकादमिक अध्ययन अपेक्षित है।

पंचम, उपलब्ध अध्ययनों में अम्बेडकर के सामाजिक न्याय, जाति-विरोधी चिंतन और संविधान-निर्माण पर पर्याप्त साहित्य उपलब्ध होने के बावजूद 21वीं सदी के भारतीय लोकतंत्र की संस्थागत एवं राजनीतिक चुनौतियों के साथ उनके समग्र संवैधानिक चिंतन को जोड़कर किए गए अध्ययन की आवश्यकता बनी हुई है।

इस प्रकार प्रस्तुत अध्ययन अम्बेडकर के विचारों को केवल ऐतिहासिक या सामाजिक न्याय के विमर्श तक सीमित न रखकर **संविधानवाद, लोकतांत्रिक शासन, नागरिक अधिकार, प्रतिनिधित्व, सामाजिक लोकतंत्र और संवैधानिक नैतिकता** के व्यापक राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में समझने का प्रयास करेगा।

साहित्य पुनरावलोकन

डॉ. भीमराव अम्बेडकर के राजनीतिक एवं संवैधानिक चिंतन पर भारतीय तथा विदेशी विद्वानों द्वारा व्यापक अध्ययन किया गया है। उपलब्ध साहित्य को मोटे तौर पर **अम्बेडकर के मूल लेखन, संवैधानिक चिंतन पर केंद्रित अध्ययनों, सामाजिक न्याय एवं जाति संबंधी अध्ययनों तथा समकालीन लोकतंत्र के संदर्भ में उनके पुनर्पाठ** के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है।

अम्बेडकर के मूल लेखन में **'जाति का विनाश'**, **'राज्य और अल्पसंख्यक'**, **'शूद्र कौन थे?'**, **'अछूत कौन थे और वे अछूत क्यों बने?'** तथा उनके संविधान सभा के भाषण उनके राजनीतिक चिंतन को समझने के प्राथमिक स्रोत हैं। इन लेखनों में जाति, सामाजिक असमानता, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, राज्य की भूमिका, अधिकार और लोकतंत्र के संबंध में उनके मूल विचार सामने आते हैं। विशेष रूप से 25 नवंबर 1949 का संविधान सभा में दिया गया भाषण उनके लोकतंत्र, संवैधानिक पद्धति, सामाजिक लोकतंत्र और संवैधानिक नैतिकता संबंधी विचारों को समझने का महत्वपूर्ण स्रोत है -

डी. आर. जाटव ने अम्बेडकर के सामाजिक एवं राजनीतिक दर्शन का व्यवस्थित अध्ययन करते हुए यह स्पष्ट किया है कि उनका चिंतन सामाजिक समानता और लोकतांत्रिक अधिकारों के प्रश्न से गहराई से जुड़ा हुआ था। उनके अध्ययन अम्बेडकर को केवल दलित नेता के रूप में देखने के बजाय एक व्यापक सामाजिक-राजनीतिक चिंतक के रूप में समझने में सहायक हैं।

एलेनॉर ज़ेलियट के अध्ययनों में अम्बेडकर के सामाजिक आंदोलन, दलित राजनीतिक चेतना और सामाजिक परिवर्तन की भूमिका पर विशेष बल मिलता है। उनके कार्यों से यह समझ विकसित होती है कि अम्बेडकर का राजनीतिक चिंतन केवल संवैधानिक संस्थाओं तक सीमित नहीं था, बल्कि वह सामाजिक आंदोलन और राजनीतिक प्रतिनिधित्व से भी संबद्ध था।

क्रिस्टोफ जाफ्रेलो ने अम्बेडकर और दलित आंदोलन के राजनीतिक विकास का विश्लेषण करते हुए यह दिखाया है कि अम्बेडकर की राजनीति सामाजिक बहिष्करण के विरुद्ध राजनीतिक शक्ति और प्रतिनिधित्व प्राप्त करने की परियोजना

से जुड़ी थी। यह दृष्टिकोण वर्तमान समय में सामाजिक न्याय और प्रतिनिधित्व की राजनीति के अध्ययन के लिए उपयोगी आधार प्रदान करता है।

गेल ऑम्वेट ने अम्बेडकर के सामाजिक एवं राजनीतिक चिंतन को सामाजिक परिवर्तन और जाति-विरोधी संघर्ष के व्यापक संदर्भ में देखा है। उनके अध्ययन से अम्बेडकर के लोकतंत्र और सामाजिक मुक्ति के संबंध को समझने में सहायता मिलती है।

आकाश सिंह राठौड़ ने अम्बेडकर के राजनीतिक दर्शन और संविधान संबंधी विचारों का दार्शनिक एवं राजनीतिक पुनर्पाठ प्रस्तुत किया है। उनके अध्ययन में अम्बेडकर के संवैधानिक चिंतन को न्याय, लोकतंत्र और आधुनिक राजनीतिक विचार के व्यापक संदर्भ में समझने का प्रयास मिलता है।

इसी प्रकार **अनुपमा राव** ने अम्बेडकर के सामाजिक एवं राजनीतिक विचारों को दलित राजनीति, अधिकार और सामाजिक न्याय के संदर्भ में विश्लेषित किया है। उनका अध्ययन यह समझने में सहायता करता है कि अम्बेडकर की राजनीति में अधिकारों और राजनीतिक शक्ति का प्रश्न किस प्रकार केंद्रीय था।

उपलब्ध साहित्य से स्पष्ट होता है कि अम्बेडकर पर पर्याप्त अध्ययन होने के बावजूद साहित्य का एक बड़ा हिस्सा **जाति-व्यवस्था, दलित आंदोलन, सामाजिक न्याय और संविधान-निर्माण** जैसे विषयों पर केंद्रित रहा है। संवैधानिक नैतिकता, सामाजिक लोकतंत्र, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और मौलिक अधिकारों पर भी महत्वपूर्ण कार्य उपलब्ध हैं, किंतु इन अवधारणाओं को 21वीं सदी के भारतीय लोकतंत्र की समकालीन संस्थागत एवं राजनीतिक चुनौतियों के साथ एकीकृत करके देखने की आवश्यकता अभी भी बनी हुई है।

विशेष रूप से वर्तमान अध्ययन का **शोध-अंतर** इस तथ्य में निहित है कि इसमें अम्बेडकर के संवैधानिक विचारों को केवल ऐतिहासिक संदर्भ में प्रस्तुत करने के बजाय उन्हें समकालीन भारतीय लोकतंत्र के पाँच परस्पर संबद्ध आयामों– **संवैधानिक नैतिकता, सामाजिक लोकतंत्र, सामाजिक न्याय, राजनीतिक प्रतिनिधित्व तथा नागरिक अधिकार**–के संदर्भ में एक साथ विश्लेषित किया जाएगा।

इस प्रकार प्रस्तुत शोध का उद्देश्य अम्बेडकर के पूर्ववर्ती अध्ययनों को दोहराना नहीं, बल्कि उनके संवैधानिक चिंतन का **समकालीन राजनीतिक पुनर्पाठ** प्रस्तुत करना है। यह अध्ययन इस प्रश्न पर विशेष बल देगा कि अम्बेडकर द्वारा प्रतिपादित संवैधानिक आदर्श वर्तमान भारतीय लोकतंत्र की संस्थागत कार्यप्रणाली और सामाजिक वास्तविकताओं के बीच मौजूद अंतर को समझने के लिए किस सीमा तक उपयोगी हैं।

अध्ययन के उद्देश्य

- अम्बेडकर के प्रमुख संवैधानिक विचारों का राजनीतिक विश्लेषण करना।
- 21वीं सदी में उनके विचारों की प्रासंगिकता का मूल्यांकन करना।
- सामाजिक लोकतंत्र एवं सामाजिक न्याय की अवधारणाओं का अध्ययन करना।
- संवैधानिक नैतिकता एवं लोकतांत्रिक शासन के संबंध का विश्लेषण करना।
- समकालीन भारतीय लोकतंत्र की चुनौतियों के संदर्भ में अम्बेडकर के विचारों का पुनर्मूल्यांकन करना।

शोध प्रश्न

1. अम्बेडकर के संवैधानिक चिंतन की प्रमुख विशेषताएँ क्या हैं?
2. उनके स्वतंत्रता, समानता और बंधुता के विचार वर्तमान भारतीय लोकतंत्र में कितने प्रासंगिक हैं?

3. संवैधानिक नैतिकता भारतीय लोकतंत्र की गुणवत्ता को किस प्रकार प्रभावित कर सकती है?
4. सामाजिक न्याय एवं राजनीतिक प्रतिनिधित्व के संदर्भ में अम्बेडकर के विचारों का वर्तमान महत्व क्या है?

परिकल्पनाएँ

1. डॉ. अम्बेडकर के संवैधानिक विचार 21वीं सदी में भारतीय लोकतंत्र की सामाजिक, राजनीतिक एवं संस्थागत चुनौतियों को समझने के लिए आज भी प्रासंगिक हैं।
2. राजनीतिक लोकतंत्र की वास्तविक सफलता सामाजिक लोकतंत्र, समानता, स्वतंत्रता और बंधुता की स्थापना के बिना संभव नहीं है।
3. संवैधानिक नैतिकता, सामाजिक न्याय और प्रभावी राजनीतिक प्रतिनिधित्व भारतीय लोकतंत्र को अधिक समतामूलक एवं उत्तरदायी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

शोध पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन में **ऐतिहासिक, गुणात्मक, विश्लेषणात्मक एवं व्याख्यात्मक पद्धति** का प्रयोग किया गया है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर के संवैधानिक एवं राजनीतिक विचारों का अध्ययन उनके मूल लेखन, भाषणों, संविधान सभा की बहसों तथा भारतीय संविधान के आधार पर किया गया है। इसके अतिरिक्त संबंधित पुस्तकों, शोधग्रंथों, शोध-पत्रों एवं प्रामाणिक अकादमिक स्रोतों का उपयोग किया गया है।

अध्ययन में **स्वतंत्रता, समानता, बंधुता, सामाजिक लोकतंत्र, संवैधानिक नैतिकता, सामाजिक न्याय एवं राजनीतिक प्रतिनिधित्व** जैसे प्रमुख विचारों का समकालीन भारतीय लोकतंत्र के संदर्भ में विश्लेषण किया गया है। आवश्यकतानुसार प्रामाणिक सरकारी आँकड़ों एवं रिपोर्टों को भी अध्ययन में सम्मिलित किया गया है।

अम्बेडकर का संवैधानिक एवं लोकतांत्रिक चिंतन

डॉ. भीमराव अम्बेडकर का संवैधानिक चिंतन भारतीय लोकतंत्र को केवल शासन-पद्धति के रूप में नहीं, बल्कि **स्वतंत्रता, समानता, बंधुता और सामाजिक न्याय पर आधारित राजनीतिक व्यवस्था** के रूप में देखने का आग्रह करता है। उनके विचारों का केंद्रीय प्रश्न यह था कि राजनीतिक लोकतंत्र को सामाजिक असमानता से प्रभावित समाज में किस प्रकार वास्तविक और स्थायी बनाया जाए। अम्बेडकर के लिए **संविधानवाद और विधि का शासन** लोकतांत्रिक व्यवस्था की आधारशिला थे। उनका मानना था कि राज्य की शक्ति संविधान द्वारा सीमित होनी चाहिए तथा नागरिकों के अधिकारों की रक्षा संस्थागत व्यवस्था के माध्यम से सुनिश्चित की जानी चाहिए। संविधान सभा में अपने अंतिम भाषण में उन्होंने संवैधानिक पद्धतियों तथा लोकतांत्रिक संस्थाओं के महत्व पर विशेष बल दिया था। यह दृष्टिकोण आज भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि लोकतंत्र की गुणवत्ता केवल चुनाव कराने से नहीं, बल्कि इस बात से निर्धारित होती है कि सत्ता संवैधानिक सीमाओं और संस्थागत उत्तरदायित्व के भीतर किस प्रकार संचालित होती है।

अम्बेडकर के चिंतन में **स्वतंत्रता, समानता और बंधुता** परस्पर संबंधित राजनीतिक मूल्य हैं। उनके अनुसार राजनीतिक लोकतंत्र तब तक पूर्ण नहीं हो सकता, जब तक सामाजिक जीवन में समानता और बंधुता का विस्तार न हो। यह विचार आज भी प्रासंगिक है। भारत में 2024 के लोकसभा निर्वाचन में **97.98 करोड़ मतदाता पंजीकृत** थे और **64.64 करोड़ मतदाताओं ने मतदान किया**। निर्वाचन आयोग के अनुसार कुल मतदान प्रतिशत 66.10 रहा। यह

आँकड़ा भारतीय लोकतंत्र की व्यापक राजनीतिक भागीदारी को दर्शाता है, किंतु अम्बेडकर के दृष्टिकोण से केवल राजनीतिक सहभागिता को सामाजिक समानता का अंतिम प्रमाण नहीं माना जा सकता। इसी कारण अम्बेडकर ने **सामाजिक लोकतंत्र** को राजनीतिक लोकतंत्र की आधारभूमि माना। सामाजिक लोकतंत्र का अर्थ उनके लिए ऐसी जीवन-पद्धति से था जिसमें स्वतंत्रता, समानता और बंधुता सामाजिक संबंधों का आधार बनें। भारतीय समाज में जातिगत विभाजन और ऐतिहासिक वंचना को देखते हुए यह विचार आज भी महत्वपूर्ण है। संविधान द्वारा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए राजनीतिक प्रतिनिधित्व की विशेष व्यवस्था इसी व्यापक सामाजिक न्याय की संवैधानिक दृष्टि का हिस्सा है।

अम्बेडकर के संवैधानिक चिंतन में **मौलिक अधिकार एवं नागरिक स्वतंत्रता** का विशेष स्थान है। संविधान का भाग-III व्यक्ति को समानता, स्वतंत्रता तथा अन्य मौलिक अधिकार प्रदान करता है और अनुच्छेद 32 के माध्यम से उनके संरक्षण के लिए संवैधानिक उपचार की व्यवस्था करता है। वर्तमान समय में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, निजता, व्यक्तिगत गरिमा तथा राज्य की शक्ति पर संवैधानिक नियंत्रण जैसे प्रश्नों के संदर्भ में यह अधिकार-आधारित दृष्टिकोण अत्यंत महत्वपूर्ण बना हुआ है। इसी प्रकार **राजनीतिक प्रतिनिधित्व और सामाजिक न्याय** अम्बेडकर के चिंतन के केंद्रीय तत्व रहे। भारतीय संविधान में लोकसभा की 543 सीटों में से **84 सीटें अनुसूचित जातियों और 47 सीटें अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित** हैं। यह व्यवस्था इस बात का संस्थागत प्रमाण है कि भारतीय संविधान ने ऐतिहासिक रूप से वंचित समूहों की राजनीतिक भागीदारी को केवल औपचारिक समानता पर नहीं छोड़ा, बल्कि विशेष प्रतिनिधित्व का प्रावधान किया। इस प्रकार अम्बेडकर का प्रतिनिधित्व संबंधी चिंतन आज भी भारतीय लोकतंत्र की संरचना में प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है।

अम्बेडकर के विचारों का एक अत्यंत महत्वपूर्ण पक्ष **संवैधानिक नैतिकता** है। उनके लिए संविधान की सफलता केवल उसके लिखित प्रावधानों पर निर्भर नहीं करती थी, बल्कि उसे संचालित करने वाले राजनीतिक नेतृत्व और संस्थाओं के आचरण पर भी निर्भर करती थी। समकालीन भारतीय न्यायपालिका ने भी संवैधानिक नैतिकता को संविधान के मूल मूल्यों और बहुलतावादी लोकतांत्रिक व्यवस्था की रक्षा से जोड़ा है। विशेष रूप से *नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ* के निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने संवैधानिक नैतिकता को बहुसंख्यक सामाजिक दृष्टिकोण से ऊपर संवैधानिक मूल्यों के संदर्भ में समझाया।

21वीं सदी के भारतीय लोकतंत्र में प्रासंगिकता

21वीं सदी में भारतीय लोकतंत्र का विस्तार हुआ है, किंतु लोकतांत्रिक संस्थाओं के विस्तार के साथ सामाजिक न्याय, प्रतिनिधित्व, अधिकार और संवैधानिक मूल्यों से जुड़े प्रश्न भी अधिक जटिल हुए हैं। इसलिए अम्बेडकर के विचारों की प्रासंगिकता का मूल्यांकन वर्तमान राजनीतिक वास्तविकताओं के आधार पर किया जाना आवश्यक है -

- **सामाजिक एवं राजनीतिक असमानता** के संदर्भ में अम्बेडकर की प्रासंगिकता सबसे अधिक दिखाई देती है। राजनीतिक क्षेत्र में प्रत्येक वयस्क नागरिक को समान मताधिकार प्राप्त है, किंतु सामाजिक एवं आर्थिक जीवन में अवसरों की समानता अभी भी पूर्ण नहीं है। यही वह अंतर है जिसे अम्बेडकर राजनीतिक लोकतंत्र और सामाजिक लोकतंत्र के बीच के अंतर के रूप में देखते थे। अतः लोकतंत्र की सफलता का मूल्यांकन केवल निर्वाचन में भागीदारी से नहीं, बल्कि सामाजिक अवसरों और सम्मान की समानता से भी किया जाना चाहिए।

- **सामाजिक न्याय एवं प्रतिनिधित्व** के क्षेत्र में भी अम्बेडकर का चिंतन महत्वपूर्ण है। 2024 के लोकसभा निर्वाचन में कुल 8,360 उम्मीदवारों में केवल **800 महिला उम्मीदवार** थीं, जबकि महिला मतदाताओं की संख्या लगभग **47.63 करोड़** थी। यह तथ्य लोकतांत्रिक सहभागिता और राजनीतिक प्रतिनिधित्व के बीच मौजूद अंतर पर विचार करने का अवसर देता है। यद्यपि यह आँकड़ा सीधे अम्बेडकर के चिंतन से संबंधित नहीं है, किंतु इससे यह व्यापक प्रश्न सामने आता है कि लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व केवल मतदाता के रूप में सहभागिता तक सीमित रहे या शासन-संस्थाओं में विविध सामाजिक समूहों की प्रभावी उपस्थिति भी सुनिश्चित करे।
- **नागरिक स्वतंत्रता एवं अधिकारों** के संदर्भ में अम्बेडकर का अधिकार-आधारित दृष्टिकोण वर्तमान लोकतंत्र के लिए महत्वपूर्ण है। मौलिक अधिकारों की संवैधानिक सुरक्षा का उद्देश्य केवल राज्य को सीमित करना नहीं, बल्कि व्यक्ति की गरिमा और स्वतंत्रता को राजनीतिक बहुमत के संभावित दबाव से सुरक्षित रखना भी है। सर्वोच्च न्यायालय ने *नवतेज सिंह जौहर* मामले में मौलिक अधिकारों को बहुमत की राजनीतिक इच्छा से स्वतंत्र संवैधानिक संरक्षण से जोड़ा था। इस दृष्टि से अम्बेडकर का संवैधानिक चिंतन आज भी व्यक्ति और राज्य के संबंधों के विश्लेषण के लिए उपयोगी है।
- **लोकतांत्रिक संस्थाओं की उत्तरदायित्वशीलता** भी अम्बेडकर के चिंतन की समकालीन प्रासंगिकता का महत्वपूर्ण क्षेत्र है। निर्वाचन आयोग के आँकड़े बताते हैं कि 2024 के लोकसभा चुनाव में 64.64 करोड़ मत पड़े और कुल निर्वाचक संख्या लगभग 97.98 करोड़ थी। इतनी विशाल लोकतांत्रिक भागीदारी के बावजूद लोकतंत्र की वास्तविक गुणवत्ता इस बात पर निर्भर करती है कि विधायिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका और अन्य संवैधानिक संस्थाएँ अपने अधिकारों का प्रयोग किस सीमा तक संवैधानिक मर्यादाओं और सार्वजनिक उत्तरदायित्व के साथ करती हैं। यही वह क्षेत्र है जहाँ अम्बेडकर की संवैधानिक नैतिकता की अवधारणा विशेष महत्व प्राप्त करती है।
- **बहुमतवाद और संवैधानिक मूल्यों** के संदर्भ में भी अम्बेडकर का चिंतन अत्यंत प्रासंगिक है। लोकतंत्र में बहुमत सरकार बनाने का आधार है, किंतु संविधान बहुमत की शक्ति को मौलिक अधिकारों और संवैधानिक सीमाओं से बाँधता है। इसलिए लोकतांत्रिक बहुमत और संवैधानिकता के बीच संतुलन आवश्यक है। सर्वोच्च न्यायालय ने भी संवैधानिक नैतिकता को बहुलतावादी एवं समावेशी समाज के संरक्षण से जोड़ा है। इस प्रकार अम्बेडकर का चिंतन यह स्पष्ट करता है कि लोकतंत्र का अर्थ केवल बहुमत का शासन नहीं, बल्कि **संवैधानिक सीमाओं के भीतर बहुमत का शासन** है।

आलोचनात्मक मूल्यांकन

अम्बेडकर के संवैधानिक विचारों की प्रासंगिकता निर्विवाद रूप से महत्वपूर्ण है, किंतु उनके विचारों का मूल्यांकन केवल प्रशंसात्मक दृष्टि से करना शोध की अकादमिक निष्पक्षता को सीमित करेगा। इसलिए उनके चिंतन की उपलब्धियों के साथ उसकी व्यावहारिक सीमाओं का परीक्षण भी आवश्यक है।

- **पहली सीमा संवैधानिक प्रावधान और सामाजिक व्यवहार के बीच अंतर** से संबंधित है। संविधान ने समानता और भेदभाव-विरोधी व्यवस्था स्थापित की, लेकिन सामाजिक संरचनाओं में परिवर्तन एक धीमी

प्रक्रिया है। इससे स्पष्ट होता है कि संविधान सामाजिक परिवर्तन के लिए आवश्यक आधार प्रदान कर सकता है, परंतु अकेले संवैधानिक प्रावधान सामाजिक चेतना को तत्काल परिवर्तित नहीं कर सकते।

- **दूसरी चुनौती** राजनीतिक लोकतंत्र और सामाजिक लोकतंत्र के बीच मौजूद अंतर की है। 2024 के चुनाव में 64.64 करोड़ मतदाताओं की भागीदारी भारतीय लोकतंत्र की मजबूती को दर्शाती है, किंतु राजनीतिक भागीदारी का यह उच्च स्तर अपने आप सामाजिक समानता, आर्थिक अवसर और प्रतिनिधित्व की समानता सुनिश्चित नहीं करता। इसलिए अम्बेडकर की सामाजिक लोकतंत्र की अवधारणा को केवल राजनीतिक अधिकारों के विस्तार से पूरा हुआ मानना उचित नहीं होगा।
- **तीसरी सीमा संवैधानिक नैतिकता के व्यवहारिक अनुप्रयोग** से जुड़ी है। संवैधानिक नैतिकता एक महत्वपूर्ण आदर्श है, लेकिन इसका प्रभाव तभी प्रभावी हो सकता है जब राजनीतिक नेतृत्व, संस्थाएँ और नागरिक स्वयं संवैधानिक मूल्यों को राजनीतिक व्यवहार का आधार बनाएं। न्यायपालिका द्वारा संवैधानिक नैतिकता को विकसित किया जाना महत्वपूर्ण है, किंतु लोकतांत्रिक संस्कृति का निर्माण केवल न्यायिक निर्णयों से संभव नहीं है। *नवतेज सिंह जौहर* जैसे निर्णयों ने इस अवधारणा को न्यायिक विमर्श में मजबूत किया है, परंतु इसका व्यापक सामाजिक प्रभाव निरंतर लोकतांत्रिक चेतना और संस्थागत आचरण पर निर्भर करता है।
- **चौथी चुनौती** यह है कि अम्बेडकर के विचारों का वर्तमान राजनीतिक विमर्श में व्यापक उपयोग होता है, लेकिन कई बार उनके **समग्र संवैधानिक एवं लोकतांत्रिक चिंतन की अपेक्षा उनके प्रतीकात्मक राजनीतिक उपयोग** पर अधिक जोर दिखाई देता है। इसलिए अम्बेडकर के अध्ययन में उनके मूल लेखन और संवैधानिक तर्कों को राजनीतिक प्रतीकवाद से अलग करके देखना आवश्यक है।

समग्र रूप से कहा जा सकता है कि अम्बेडकर के संवैधानिक विचारों की शक्ति इस तथ्य में निहित है कि वे भारतीय लोकतंत्र को केवल चुनावी व्यवस्था नहीं मानते, बल्कि उसे **सामाजिक न्याय, समानता, नागरिक स्वतंत्रता, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और संवैधानिक नैतिकता** से जोड़ते हैं। उनकी सीमा यह नहीं है कि उनके संवैधानिक आदर्श अप्रासंगिक हो गए हैं, बल्कि वास्तविक चुनौती उनके आदर्शों को सामाजिक एवं राजनीतिक व्यवहार में प्रभावी रूप से लागू करने की है। यही अंतर 21वीं सदी में अम्बेडकर के संवैधानिक चिंतन की वास्तविक प्रासंगिकता और उसकी सबसे बड़ी चुनौती दोनों को सामने लाता है।

निष्कर्ष एवं सुझाव

अध्ययन के विश्लेषण से स्पष्ट हुआ कि डॉ. अम्बेडकर का संवैधानिक चिंतन केवल संविधान-निर्माण तक सीमित नहीं था, बल्कि उसमें **लोकतंत्र, सामाजिक न्याय, नागरिक अधिकार, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और संवैधानिक नैतिकता** का व्यापक दृष्टिकोण निहित था।

अध्ययन से यह भी स्पष्ट हुआ कि भारत में राजनीतिक लोकतंत्र ने व्यापक जनभागीदारी सुनिश्चित की है, किंतु सामाजिक एवं आर्थिक असमानताओं के कारण राजनीतिक समानता और सामाजिक समानता के बीच अभी भी अंतर मौजूद है। अतः अम्बेडकर द्वारा प्रतिपादित **सामाजिक लोकतंत्र** की अवधारणा आज भी महत्वपूर्ण बनी हुई है।

संवैधानिक नैतिकता के संदर्भ में अध्ययन यह दर्शाता है कि संविधान की सफलता केवल उसके प्रावधानों पर निर्भर नहीं करती, बल्कि राजनीतिक संस्थाओं और नागरिकों के संवैधानिक आचरण पर भी निर्भर करती है। इसी

प्रकार सामाजिक न्याय एवं राजनीतिक प्रतिनिधित्व के लिए संवैधानिक व्यवस्थाएँ आवश्यक हैं, किंतु उनकी वास्तविक प्रभावशीलता सामाजिक व्यवहार और राजनीतिक संस्थाओं के संचालन पर निर्भर करती है।

समग्र रूप से अध्ययन की तीनों परिकल्पनाएँ **व्यापक रूप से पुष्ट** होती हैं। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि अम्बेडकर के संवैधानिक विचार 21वीं सदी के भारतीय लोकतंत्र के लिए केवल ऐतिहासिक विरासत नहीं, बल्कि **समानता, सामाजिक न्याय, नागरिक स्वतंत्रता और संवैधानिक लोकतंत्र को मजबूत करने वाला समकालीन राजनीतिक मार्गदर्शन** प्रदान करते हैं।

सुझाव

अध्ययन के निष्कर्षों के आधार पर भारतीय लोकतंत्र को अधिक समतामूलक, उत्तरदायी एवं संवैधानिक मूल्यों पर आधारित बनाने के लिए निम्न सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं–

1. **संवैधानिक नैतिकता को मजबूत किया जाए**– राजनीतिक संस्थाओं, जनप्रतिनिधियों एवं नागरिकों में संविधान के मूल्यों और लोकतांत्रिक मर्यादाओं के प्रति अधिक जागरूकता विकसित की जानी चाहिए।
2. **सामाजिक न्याय और समान अवसर को प्रभावी बनाया जाए**– ऐतिहासिक रूप से वंचित वर्गों के लिए संवैधानिक संरक्षण के साथ शिक्षा, रोजगार और राजनीतिक भागीदारी के वास्तविक अवसरों को मजबूत किया जाना चाहिए।
3. **नागरिक अधिकारों एवं लोकतांत्रिक संस्थाओं की स्वायत्तता सुनिश्चित की जाए**– मौलिक अधिकारों, विधि के शासन, लोकतांत्रिक असहमति तथा संस्थागत उत्तरदायित्व को लोकतांत्रिक शासन का अनिवार्य आधार बनाया जाना चाहिए।
4. **राजनीतिक लोकतंत्र को सामाजिक लोकतंत्र से जोड़ा जाए**– केवल निर्वाचन एवं राजनीतिक भागीदारी को लोकतंत्र की सफलता का आधार न मानकर स्वतंत्रता, समानता और बंधुता को सामाजिक जीवन में प्रभावी बनाने पर बल दिया जाना चाहिए।
5. **अम्बेडकर के विचारों का समग्र पुनर्पाठ किया जाए**– उन्हें केवल राजनीतिक प्रतीक या सामाजिक न्याय के प्रतिनिधि के रूप में देखने के बजाय उनके संवैधानिक, लोकतांत्रिक एवं राजनीतिक चिंतन को समकालीन संदर्भों में समझने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अम्बेडकर, बी. आर. (1945). *व्हाट कांग्रेस एंड गांधी हैव डन टू द अनटचेबल्स* (अछूतों के लिए कांग्रेस और गांधी ने क्या किया)। ठैकर एंड कंपनी।
2. अम्बेडकर, बी. आर. (1946). *हू वर द शूद्राज? हाउ दे केम टू बी द फोर्थ वर्ण इन द इंडो-आर्यन सोसाइटी* (शूद्र कौन थे?)। ठैकर एंड कंपनी।
3. अम्बेडकर, बी. आर. (1946). *स्टेट्स एंड माइनॉरिटीज* (राज्य और अल्पसंख्यक)। ठैकर एंड कंपनी।
4. अम्बेडकर, बी. आर. (1948). *द अनटचेबल्स: हू वर दे एंड व्हाय दे बिकेम अनटचेबल्स?* (अछूत: वे कौन थे और अछूत क्यों बने?)। अमृत बुक कंपनी।
5. अम्बेडकर, बी. आर. (2014). *जाति का विनाश*। नवयान।

6. अम्बेडकर, बी. आर. (2014). *बुद्ध और उनका धम्म*। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
7. भारत सरकार। (2024). *भारत का संविधान*। विधायी विभाग, विधि एवं न्याय मंत्रालय, भारत सरकार।
8. संविधान सभा। (1946-1950). *संविधान सभा की बहसें*। भारत सरकार।
9. अम्बेडकर, बी. आर. (1979-2019). *डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर: लेखन और भाषण* (खंड 1-17)। महाराष्ट्र सरकार, शिक्षा विभाग।
10. अम्बेडकर, बी. आर. (1990). *डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर: लेखन और भाषण* (खंड 5)। महाराष्ट्र सरकार, शिक्षा विभाग।
11. अम्बेडकर, बी. आर. (1991). *डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर: लेखन और भाषण* (खंड 2)। महाराष्ट्र सरकार, शिक्षा विभाग।
12. रॉड्रिग्स, वी. (सं.). (2002). *बी. आर. अम्बेडकर के आवश्यक लेखन*। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
13. जाफ्रेलो, क्रिस्टोफ। (2005). *डॉ. अम्बेडकर और अस्पृश्यता: जाति का विश्लेषण और संघर्ष*। कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस।
14. ओमवेट, गेल। (1994). *दलित और लोकतांत्रिक क्रांति: डॉ. अम्बेडकर और औपनिवेशिक भारत में दलित आंदोलन*। सेज प्रकाशन।
15. ओमवेट, गेल। (2004). *अम्बेडकर: एक प्रबुद्ध भारत की ओर*। पेंगुइन बुक्स इंडिया।
16. जेलियट, एलेनॉर। (1992). *अछूत से दलित: अम्बेडकर आंदोलन पर निबंध*। मनोहर प्रकाशन।
17. राव, अनुराधा। (2009). *जाति का प्रश्न: दलित और आधुनिक भारत की राजनीति*। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय प्रेस।
18. ऑस्टिन, ग्रैनविल। (1966). *भारतीय संविधान: एक राष्ट्र की आधारशिला*। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
19. ऑस्टिन, ग्रैनविल। (1999). *एक लोकतांत्रिक संविधान का संचालन: भारतीय अनुभव*। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
20. खोसला, माधव। (2020). *भारत का संस्थापक क्षण: एक असाधारण लोकतंत्र का संविधान*। हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
21. शंकर, शैलजा। (2019). *भारतीय संविधान को कैसे पढ़ें*। परमानेंट ब्लैक।
22. गुरु, गोपाल। (सं.). (2001). *अपमान: दावे और संदर्भ*। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
23. टेल्टुम्बडे, आनंद। (2016). *महाड़: प्रथम दलित विद्रोह का निर्माण*। आकार बुक्स।
24. मिल, जॉन स्टुअर्ट। (1861/1991). *प्रतिनिधि सरकार पर विचार*। प्रोमीथियस बुक्स।
25. रॉल्स, जॉन। (1971). *न्याय का सिद्धांत*। हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
26. ड्वर्किन, रोनाल्ड। (1977). *अधिकारों को गंभीरता से लेना*। हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
27. भारत निर्वाचन आयोग। (2025). *लोकसभा के लिए सामान्य निर्वाचन 2024: एक एटलस*। भारत निर्वाचन आयोग।
28. भारत निर्वाचन आयोग। (2024). *लोकसभा सामान्य निर्वाचन 2024: सांख्यिकीय रिपोर्ट*। भारत निर्वाचन आयोग।

29. भारत सरकार, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय। (2024). *वार्षिक रिपोर्ट 2023-24*। भारत सरकार।
30. भारत सरकार, जनजातीय कार्य मंत्रालय। (2024). *वार्षिक रिपोर्ट 2023-24*। भारत सरकार।
31. भारत का सर्वोच्च न्यायालय। (2018). *नवतेज सिंह जौहर एवं अन्य बनाम भारत संघ*, रिट याचिका (आपराधिक) संख्या 76/2016, निर्णय दिनांक 6 सितंबर 2018।
32. भारत का सर्वोच्च न्यायालय। (2017). *के. एस. पुट्टस्वामी (सेवानिवृत्त) एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य*, रिट याचिका (सिविल) संख्या 494/2012, निर्णय दिनांक 24 अगस्त 2017।

ISARA INSTITUTE OF MANAGEMENT & PROFESSIONAL STUDIES

RESEARCH GATEWAY

AROGYAM ONLINE

PARIVARTAN PSYCHOLOGY CENTER

भारतीय भाषा, शिक्षा, साहित्य एवं शोध

ISSN 2321 – 9726

WWW.BHARTIYASHODH.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT SCIENCE & TECHNOLOGY

ISSN – 2250 – 1959 (0) 2348 – 9367 (P)

WWW.IRJMST.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF COMMERCE, ARTS AND SCIENCE

ISSN 2319 – 9202

WWW.CASIRJ.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT SOCIOLOGY & HUMANITIES

ISSN 2277 – 9809 (0) 2348 - 9359 (P)

WWW.IRJMSH.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF SCIENCE ENGINEERING AND TECHNOLOGY

ISSN 2454-3195 (online)

WWW.RJSET.COM

INTEGRATED RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT, SCIENCE AND INNOVATION

ISSN 2582-5445

WWW.IRJMSI.COM

JOURNAL OF LEGAL STUDIES,POLITICS AND ECONOMICS RESEARCH

WWW.JLPER.COM